प्रशासनिक हाथी पर सत्ता का अंकुश

आलोक मेहता

सरकारी नौकरी में हैं तो आप बहुत कुछ कर सकते हैं। लाठी-गोली चलवा सकते हैं। गिरफ्तार करवा सकते हैं। लाखों-करोड़ों के ठेकों और बिलों की स्वीकृति पर हस्ताक्षर कर सकते हैं। सरकारी खर्च पर दौरे के खाते में परिवार सहित सैर-सपाटा कर सकते हैं। सत्तारूढ़ नेता, मुख्यमंत्री, मंत्री, सांसद, विधायक के दरबारी की तरह सेवा कर सकते हैं। धर्मनिष्ठ हैं तो भावना के अनुरूप धार्मिक स्थल पर जाकर भावभक्ति से प्रार्थना कर सकते हैं। वैचारिक आधार पर राष्ट्रीय स्वयंसेवक की शाखा में जा सकते हैं या संघ से जुड़े संगठन के कामकाज में सहयोग दे सकते हैं। संघ से उपजी भारतीय जनता पार्टी सत्ता में हो तो उनके आदर्श नेताओं के विचारों के प्रचार-प्रसार में हरसंभव योगदान कर सकते हैं लेकिन देश के पहले प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू के बताए आदर्शों और रास्तों का समर्थन एवं वर्तमान सरकार के रुख पर असहमति कतई व्यक्त नहीं कर सकते। इस प्रशासनिक अंकुश का ताजा प्रमाण मध्य पद्रेश में भारतीय प्रशासनिक सेवा के काबिल अधिकारी अजय सिंह गंगवार पर हुई कार्रवाई से मिला। गंगवार ने डिजिटल इंडिया की क्रांति में भागीदारी करते हुए फेसबुक पर नेहरू की नीतियों का समर्थन एवं वर्तमान राजनीतिक प्राथमिकताओं पर व्यंग्यात्मक टिप्पणी कर दी। उन्होंने लिखा था- 'जरा गलतियां तो बता दीजिए जो नेहरू को नहीं करनी चाहिए थीं तो अच्छा होता। यदि उन्होंने आपको 1947 में हिंदू तालिबानी राष्ट्र बनने से रोका तो यह उनकी गलती थी? उन्होंने आईआईटी, भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संस्थान, प्रबंध संस्थान, भारतीय इस्पात प्राधिकरण-इस्पात संयंत्र, बांध, थर्मल पावर स्टेशन बनवाए तो वह उनकी गलती थी? आसाराम बापू और रामदेव जैसे इंटेलेक्चुअल की जगह साराभाई, होमी भाभा को सम्मान और काम करने का मौका दिया, यह उनकी गलती थी? उन्होंने देश में गोशाला और मंदिर की जगह यूनिवर्सिटी खोली, यह भी घोर गलती थी? उन्होंने आपको अंधविश्वासी की जगह एक वैज्ञानिक रास्ता दिखाया यह भी गलती थी?'

इस टिप्पणी में व्यंग्य होने के बावजूद प्रदेश या देश के किसी भाजपा अथवा संघ नेता के विरुद्ध कोई शब्द नहीं है। म.प्र. या केंद्र सरकार के किसी निर्णय के विरुद्ध नहीं लिखा गया है। किसी प्रशासनिक निर्णय को नहीं मानने की बात भी नहीं लिखी है लेकिन म.प्र. की भाजपा सरकार के भक्तनुमा कुछ बड़े अधिकारियों ने फेसबुक की इस टिप्पणी पर नेताओं का ध्यान दिलाया और 'प्रशासनिक निर्णय' के तहत अजय सिंह गंगवार को बड़वानी के जिला कलेक्टर से हटाकर सचिवालय भेज दिया गया। इस प्रशासनिक अधिकार को सामान्यत: चुनौती नहीं दी जा सकती, क्योंकि तबादले के आदेश में विवादास्पद टिप्पणी का कोई उल्लेख नहीं है। अनधिकृत रूप से गंगवार को चेतावनी के साथ अन्य अधिकारियों को भी ऐसी असहमतियों या नेहरू की नीतियों के समर्थन से बचने की 'नेक सलाह' दे दी गई। सवाल यह है कि भारत सरकार के प्रशासनिक सेवा के नियम-कानून के अंतर्गत अधिकारियों को राजनीति में भागीदारी, समाचार माध्यमों से संबंध और सरकार की आलोचना को अनुचित माना जाता है। मतलब वे किसी राजनीतिक दल के सदस्य नहीं बन सकते और निर्धारित सरकारी कामकाज और पदेन जिम्मेदारी के अलावा मीडिया को मनचाहे ढंग से जानकारी नहीं दे सकते हैं। न ही सरकार का विरोध कर सकते हैं। कार्मिक विभाग के नियमों में 1968 के बाद से कोई बदलाव नहीं हुए हैं और तब फेसबुक या सोशल मीडिया का अस्तित्व ही नहीं था। भारतीय प्रशासनिक सेवा यानी आई.ए.एस. की योग्यता के लिए राजनीति, इतिहास, भाषा, विज्ञान की अच्छी जानकारी तो अनिवार्य होती है। इसलिए महात्मा गांधी, नेहरू-पटेल से लेकर नरेंद्र मोदी तक के राजनीतिक विचारों की जानकारी होना आवश्यक एवं स्वाभाविक माना जाएगा। भारतीय प्रशासनिक सेवा की परीक्षा में सफलता और चयन के बाद जिस लालबहादुर शास्त्री प्रशासनिक प्रशिक्षण संस्थान में जाना होता है, वहां नेहरू सहित हर प्रधानमंत्री जाते रहे हैं एवं नेहरू युग से अटल-मनमोहन राज तक काम कर चुके अनुभवी पूर्व प्रशासक-सचिव प्रशिक्षणार्थियों को ज्ञान देते रहे हैं। प्रशिक्षणार्थियों को यह भी पढ़ाया-सिखाया जाता है कि वे नीतियों और नियम-कानूनों को ध्यान में रखकर शीर्षस्थ मंत्रियों, नेताओं से असहमति व्यक्त कर सकते हैं। किताबों में लिखा गया है कि नेहरू या इंदिरा गांधी और अटल बिहारी वाजपेयी तक के साथ काम करने वाले प्रशासनिक अधिकारियों ने किस तरह कई अवसरों और मामलों पर असहमति व्यक्त की और निर्णय बदलवाए।

हाल के वर्षों में सत्ताधारी नेता और उनसे जुड़े कुछ प्रशासनिक अधिकारी अधिक मनमानी एवं कठोरता बरतने लगे हैं। 'यस मिनिस्टर' की ब्रिटिश टी.वी. शृंखला की तरह वे ऐसे अधिकारी चाहते हैं जो नेता की इच्छा पर रात को दिन एवं गधे को भी शेर मानने को तैयार रहें।

पुराना रिकॉर्ड यह भी बताता है कि पिछले 60 वर्षों में गांधी, नेहरू के आलवा कार्ल मार्क्स और श्यामाप्रसाद मुखर्जी या डॉ. हेडगेवार के आदर्शों को मानने वाले पचीसों लोग प्रशासनिक सेवा में रहे। वे कविता, कहानी, उपन्यास के जरिये राजनीतिक-प्रशासनिक व्यवस्था पर टिप्पणी करते रहे। प्रधानमंत्रियों और मुख्यमंत्रियों के समक्ष अपनी वैचारिक पृष्ठभूमि के आधार पर राय भी देते रहे। हां, अस्सी के दशक से राजनीतिक प्रतिबद्धता के साथ वैयक्तिक प्रतिबद्धता का सिलसिला शुरू होने पर महत्वपूर्ण प्रशासनिक नियुक्तियों में बहुत हद तक भेदभाव होने लगा। लेकिन हाल के वर्षों में सत्ताधारी नेता और उनसे जुड़े कुछ प्रशासनिक अधिकारी अधिक मनमानी एवं कठोरता बरतने लगे हैं। 'यस मिनिस्टर' की ब्रिटिश टी.वी. शृंखला की तरह वे ऐसे अधिकारी चाहते हैं जो नेता की इच्छा पर रात को दिन एवं गधे को भी शेर मानने को तैयार रहें। इसी प्रवृत्ति का नतीजा है कि नेहरू, गांधी, अकबर, सिकंदर के नाम और निशान तक को मिटा देने का प्रयास होने लगा है। सरकारी अधिकारी या शैक्षणिक एवं वैज्ञानिक संस्थानों के प्राध्यापक एवं शोधार्थी यदि गुलामों की तरह सत्ता व्यवस्था की अंधभक्ति के साथ काम करने लगेंगे तो क्या दुनिया में भारत को सही अर्थों में आधुनिक माना जा सकेगा? नेहरू-महात्मा गांधी का नाम मिटाकर क्या दुनिया में भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं दर्शन का झंडा लहराया जा सकेगा?

www.outlookhindi.com